मत् सुखसागर सद्गुरु स्मरणार्थम्

गुणस्थान दर्पण ॥

(कर्त्ता)

॥ रतलाम निवासी ॥

॥ रावत शेरसिंह गौरुवशी. ॥

शान्तमूर्त्ति मुनिराज श्रीत्रैलोक्य-
सागरजी महाराजके
सदोपदेश से

लोहावटनिवासी फूलचन्दजीपारख तथा
बीकानेरनिवासी सुगनचन्दजी श्रावणसुखाने
प्रकाशितकिया

श्री जैन प्रभाकर प्रिंटिंग प्रेस रतलाम मेछपा

ावृत्ति १००० { सर्व हकस्वाधीन { अमूल्य

० सं० १९७१ वीरसं० २४४० सन् १९१४.

दि में से सेकमो बोलचालादि निकालकर भव्य जीवोकों कृतार्थ किये साधुसाध्वी श्रावक ओर श्राविका जोकि आपकी शीतलछायामें निवासकरतेंहे आपके अवर्णीय उपगार को हरगिज नहीं भूलसक्ते

इस लिये हे भवतारक ! आपके अनुपम गुणो को स्मरणकर्ता हुवा यहलघुग्रन्थ आपकी पवित्र सेवा में स्मरणार्थ समर्पण करताहु

॥ शुभम् भूयात् ॥

चरणो कादास

शेरसिंह

रतलाम—मालवा

॥ श्री ॥

भूमिका

इस पारावारससारमें आकर जिसमनुष्यने जैन-धर्म के स्याद्वाद रहस्यकोनहीजाना, नयनिक्षेपे गुणस्थानादिके अतुलित रस काआस्वादननहींकि-या वहमनुष्य संसारमें आकर अपना जन्मकेवल निष्फलकरगया

यहतो सर्व लोगजानतेहैं के 'मन' यहएक वगैर-लगामका अश्व गिनागयाहै ! नहीं । नहीं । भूखा ! अश्व । हाथी । सोना । चादी । जोकेसीधेरास्ते व-शुरूतामें आसक्तेहैं उनसेभी यह "मन" महाबल-वान्हैं यहमन क्षणमेंनरक, क्षणमें स्वर्ग व क्षणमें मनुष्य भवमें लेजाताहै. इसदुष्टकी ऐसीगतीहै

कीवशमें न कियाजायतो एकान्त नरक का वधनकर वादेताहै

अस्तु अवहमको इसविषयपरआनाचाहिये के यह "मन" कैसेवशवर्त्तिहो ?

इसदुनियामे आजकलकई आडवरीलोग नाममात्रके वेशधारी, ठगविद्याके पाठी कइयकजोलेजाईयोंको भ्रमजालमें फसानेकेलिये, "त्रिपकुम्भपयों मुख" केसदश मीठे २ वचन कहकरठगलेतेहैं, और कहतेहैं केहमारेपासऐसी चीजहै जिससेतुमारा मन अचलरहसक्ताहै वसक्या पूछिये फिरतो पाचसातजने भक्तहुवेके जमीदुकानदारी। चलागरु वेंकी यहकेवल वितण्डावाद है तोउनकी वातजातीहै वास्तेअजिनिवेशिकमिथ्यात्वावश होकर लोगोको वहकातेहैं और अखीर "नकटेराजा व प्रजा" केदृष्टान्तको सार्थक करदेतेहै गरजकी जिनेश्वरप्ररूपित

सत्यमार्गकोभूल असत्यपरघूमतेहैं

अगर सत्य बात पूछीजावेतो द्रव्यानुयोग एक ऐसी चीज है जिस के विचार करनेसे चपल से चपल मन क्षणभरमें वशमें होजाताहै

षट्द्रव्य नय निक्षेपे गुणस्थानादि पदार्थों का मुख्यसारयहीहै के मन को वशमे कर आत्मा स्वरूप मे रमणताकरती है जिससे कि निर्जरा प्राप्तकर मोक्ष सुखको पाश्ते हैं गरजकी सबसे पहिले (याने योग्यता विशेष प्राप्तहोनेपर) इनही पर ध्यान देना उचितहै आज कल वहजमाना आगयाहै के लोग थोडे बहुत पढे लिखे वबोलने की चतुराई कोसीख के पण्डितके पिता महबन बैठतेहैं

कुछेक लिखने की व व्याख्यानकी कलाठीक हुईके लोगोसे "वाहवाह" के आवाजों से पूजे

जाते है मगरसज्जनो जबतक जैनधर्म कैठीकरह
स्य कोन समझ गुणस्थानादि का अन्यासनहीं
किया तबतक वृथा जन्म खोया ऐसा ही समझ
ना योग्य होगा

मान्यवरो येगुणस्थान बडे २ ग्रथोमें होनेसे व
खास कर प्राकृत सस्कृतमें होनेसें हरेकभाई
इस्कालाभ नहीं लेसक्के वास्ते सर्व साधारण
केलाभार्थ अध्ययन की तौरपर पठन करने केहे-
तुसे पूज्यपाद श्रीमान् गणनायक शान्तमूर्त्ति मुनि
राज श्री त्रैलोक्य सागरजी के सुशिष्य श्री आनद
सागरजी महाराज के आज्ञानुसार इसग्रथकोमैंने
लिखने कासाहास कियाहै, सज्जन जन मैरी भावी
आशा को सफलकरें

अन्यग्रथों के अतिरिक्तइस्मे गुणस्थानक्रमा
रोह वृत्ति कीवि शेष सहायताली गईहै

इस्मे श्रीमान् आनदसागरजी महागजने बहुत स-हायता दीहै वास्ते आपको अत.करणपूर्वक धन्य हा वाद देताहु

इस्मे क्रमश. १४ गुणस्थानोकावर्णन बहुत ठीक तोर पर बतायागयाहै इसग्रथ के अन्तमें श्रीमान् वीरपुत्र श्री आनदसागरजी महाराज कृत जीना-सर पार्श्वनाथ का स्तवन छपायाहै

इसग्रंथ के छपवानेमे श्रावकवर्य इन्द्रचन्दजी पारख (राठोड) (लोहावट निवासी) तथा बी-का नेर निवासी श्राद्धवर्य सुगनचदजी 'श्रावण सुखा (राठौरु) ने मदद दीहै वास्ते आपका आ-भार मानाजाताहै

अतमे मैं सर्वसाहबो सेविनति करताहुके इसमे से हसक्षीरनीरतवन सारग्रहण कर भूल चूकक्षमाकरे

॥ श्री वीतरागाय नम ॥

॥ श्री सद् गुरुभ्यो नमः ॥

॥ गुणस्थान दर्पण ॥

(मगला चरणम्)

तुभ्यमनस्त्रि भुवनार्तिहरायनाथ ।
तुभ्यनमः क्षितितलामलभूषणाय ।
तुभ्यनमस्त्रिजगतः परमेश्वराय ।
तुभ्यनमो जिन भवोदधी शोषणाय ॥ १ ॥

॥ दोहरे ॥

स्तवीदेव अरिहतको,
जोकछुकीजे काम ।
स्वत सिद्धसो होतहै,
कहां विघ्नको नाम ॥ १ ॥
श्रीजिनदत्त कुशल गुरू,
युग परधान विख्यात ।
तिनके चरण कमल नमुं ।

मन शुद्धनितपरभात ॥ २ ॥
सकल श्रमण आर्यातणा ।
चरणे शीस नमाय ॥
गुण स्थान वर्णन करु ॥
शास्त्ररीति चितलाय ॥ ३ ॥

यह संसार अनादि काल सें नित्या-
नित्यचला आता है, इसमें हरएक काल चक्रमे
एक अवसर्पिणी तथा एक उत्सर्पिणी होती रहती
है उन दोनों चक्रों में बारह आरे होते है उत्सर्पि
णी मे दिन २ जैन शासन कीउन्नती तथा अवस
र्पिणी में अवन ती होती जाती है

हरएक उत्सर्पिणी अवसर्पिणी मे चोवीस २
तीर्थंकर होते है वे सर्वस्याद्वाद धर्मकाउपदेश
देकर भव्यजीवों को संसार समुद्र सें तिरानेका
रास्ता बताते है ऐसे परमोपकारी तीर्थंकरो को प्र-
थम नमस्कार करता हु

तत्पश्चात् पूज्यपाद गुरु महाराज को नम स्कार करता हु जो की आमन्नो पगारी व तीर्थं करों के अभाव में तद्रूपउपदेश करते है।

श्रीजिनेश्वर देवने नय, निक्षेपे, गुण स्थानादि का वर्णन फरमाया तथा उनहीके कथना नुसार गणधर व आचार्ये की परपरा से अनेक ग्रथोमे इनका कथनचलता है तदानुसार गुरु महाराज के अनुग्रह सें भव्यात्मा कों फल होता आया होरहा है व होता रहे गा परतु इनका अधिकार प्राय प्राकृत व सस्कृत ग्र थोमे है वास्ते प्रत्येक प्राणिको लाभ मिलना दुष्वार है इस वात को सोच कर तथा खासकर पूज्य पाद गुरुवर्य श्रीश्री श्री १००८ श्री श्रीमान् गणनायक शातमूर्त्ति श्री त्रैलोकसागरजी महाराज के सुवि नी त- शिष्य, श्रीमान् आनदसागरजीमहाराज के आज्ञानुसागर तथा कितनेक मेरे मित्रों के अत्या ग्रहसे गुरु महराजके कृपाका अवलंबन करके आग

मरित्यानुसार कि चित् स्वरूप वर्णन करने का प्रयत्न करता हु।

॥ गुणस्थानोंका सविस्तार ॥ स्वरूप॥

॥ पूर्वमें प्राप्त नहीं हुवे ऐसे गुण विशेषकाजो आविर्भावहोना सो गुण स्थानकहेजा तेहैं वे १४ होते हैं ज्ञानियों ने इनको मोक्ष रूप प्रासादमे पहुचे ने के वास्ते सोपान। (Steps) कहेहैं।

॥ गुणस्थानो के नाम ॥

१ मिथ्यात्व २ सास्वादन ३ मिश्र ४ अव्रतिसम्यक्त्व ५ देशरविति ६ प्रमत्त (सर्व विरति) ७ अप्रत्तम ८ निवृत्तिवादर (अपूर्वकरण) ९ अनिवृत्ति वादर १० सूक्ष्मसपराय ११।

पशांतमोह १२ क्षीणमोह १३ सयोगी केवली १४
अयोगी केवली।

॥ प्रथम मिथ्यात्वगुणस्थान ॥

इसगुणस्थानका नाम श्रवणकरतेही प्रथम
ह शका उपस्थितहोती है की मिथ्या त्व ऐसा ना
होतेहुवेभी गुणस्थान क्यों कहा ?

उत्तर –जोप्रश्नकर्ता ! आपका प्रश्नयथार्थ
है परतु क्या आप ऊपर इस वातको नहीं पढचु
के है की पूर्वमे अप्राप्त गुणके आविर्भावको गु
णस्थान कहतेहैं.

प्रश्न –अवश्य हम इस वात कों पढ चुके है
परंतु हमारे समझमे नहीं आता की उसको क्या वि
शेष गुणकी प्राप्ति हुई.

उत्तर.–अच्छा तो साहिब ! सुनिये–
प्रथम आपके समक्ष मिथ्यात्वाकास्वरूप कह

सुनाता हु जिस से आपको क्रमश ठीक ज्ञान होजा वेगा।

मिथ्यात्व केमूल दो भेद होते है १ व्यक्त मिथ्यात्व २ अव्यक्तमिथ्यात्व जिस जीवको साज्ञि पचेन्द्रिपन प्राप्त होकर क्रमश कुदेव कुगुरु और कुधर्म पर श्रद्धा बढ जाती है वह व्यक्त मिथ्यात्व कहा जाता है ऐसे मिथ्यात्व वालाजीव मिथ्यात्वको छोडकर मिथ्यात्व गुणस्थान पर आता है उसको यहा पर यह गुण विशेष हुआ की पहिले सु अथवा कु कोई भी प्रकार के देव गुरू धर्म को नहीं जानताथा और अब कु देव, गुरु, धर्म को जाननेलगा इस लिये इसे मिथ्यात्व गुणस्थान कहते है।

अव्यक्त मिथ्यात्व व्यवहारतथा अव्यवहार दोनोही राशियोंमें समान वर्तता है अव्यवहार राशिस्थजीव को अनादि अव्यक्त मिथ्यात्व नियम करके होताहै और व्यवहार राशिस्थ जीवको केवल अना

भोग मिथ्यात्व मे ही अव्यक्त मिथ्यात्व होता है वा
की चार मिथ्यात्वोमे व्यक्त मिथ्यात्व होता है प्रस
गसे क्रमश ५ मिथ्यात्वो का वर्णन कहते हैं।

१ अभिग्रह मिथ्यात्व.—इसके उदयसे केवल
कुदेव, गुरु और धर्म पर श्रद्धारक्खे और कुछभी
न समझे

२ अनभिग्रह मिथ्यात्व — इसके उदय
सें जीवको किसी परभी आग्रह नही होता चाहे
सुदेव, गुरुधर्म होयाहे कुदेव गुरुधर्म हो सर्व पर श्र
द्धा बराबर होती है।

३ अभिनिवेशिक मिथ्यात्व —इसके उदय से
प्राणी सच्ची बात कोजानता हुवा भी अपनी म
न कल्पना से मिथ्या प्ररूपण करता है तथा अपने
पकडे हुवे हठवादको नहीं छोडता किसी कविनेठी
क कहा है

॥ सवैया ॥

पकडे सो छोडे नही मूरख खरका पूंठ, शास्त्र रीतजाणे नहीं फूठीताणेमूठ। फूठीताणे मूठ वचन अभिमानी भाखे। पढे न अक्षर एक टाग सबही म राखे। मिथ्याकरे विवाद फूठका चाले झगडा। छोडनकी तल्लास पूठ जो खरका पकडा ॥ १ ॥

४ शसयिक मिथ्यात्व –इसके उदयसे जीव आप्तवचन पर श्रद्धा नहीं रखकर नाना प्रकारके सल्कप विकल्प किया करता है तथा अपने मान हानी होने के अभिमान से मनकी शङ्का किसी कों नहीं पूछता है

५ अनाभोग मिथ्यात्व –नतो सुदेव, गुरु, धर्म कों जानता है औरनकु देव गुरु धर्मको जानता केवल खाना पीना और मौज उडाना

(Eat drink & be marry) इसके सिवाय कुछनहीं जानता है.

उपरोक्त ५ मिथ्यात्वों मे से प्रथम के ४ व्यक्त मिथ्यात्व में है बाकी का १ मिथ्यात्व तथा अव्यवहार राशिस्थ जीव, अव्यक्त मिथ्यात्व में है।

इनके सिवाय मिथ्यात्वके ४ भेद और भी होते हैं।

१ प्रवर्त्तन मिथ्यात्व -इसके उदयसे जीव हमेशा मिथ्यात्व मे रमण करता है

२ परूपणा मिथ्यात्व –इसके उदयसे प्राणी केवल मनकल्पित बातों की प्ररूपणा करता हुवा स्वपक्षकी प्रबलता करनेका प्रयत्न करता रहता है।

३ परिणाम मिथ्यात्व –चाहे प्राणी उपरोक्त दोनो मिथ्यात्व को त्यागदे तथापि जो इसका उ

दय होतो नित्य प्रति उसके अध्यवसाय मिथ्यात्व में लगे रहते हैं ।

४ प्रदेश मिथ्यात्व—आत्माके हरएक प्रदेश मे रमण कर जाता हैं किंतु अष्ट रुचक प्रदेशतो सदैव निर्मल स्थान में रहतें हैं।

ग्रथकारोने १० प्रकारके भी मिथ्यात्व फरमाये हैं तथा दसविहे मिछत्ते पन्नत्ते तजहा—

१ अधम्मे धम्मसन्ना २ धम्मे अधम्मसन्ना
३ मग्गेउमग्ग सन्ना ४ उमग्गे मग्गसन्ना
५ अजीवेसुजीवसन्ना ६ जीवेसुअजीवसन्ना
७ असाहुसु साहुसन्ना ८ साहुसुअसाहुसन्ना
९ असुत्तेसुसुत्तसन्ना १० सुत्तेसुअसुत्तसन्ना

इस प्रकार जीव मिथ्यात्व गुणस्थान वश ४ गति ८४ लक्षजीवायोनी मेपरिभ्रमण करता रहता हैं जिस प्रकार चेट (गेन्दी) के टक

रसे गेंद भ्रमण करता है तैसेही मिथ्या त्ववश जीव भ्रमण करता है।

यह गुण स्थानक बहुत दूरतककी श्रेणीका है, देखिये श्री महामहोपाध्याय श्रीमद् यशोविजय-जी महाराज फरमाते हैं।

पर परणति कर आपणी जाणे। वरते आर्त्तध्याने ॥ साधक बाधकता नवी जाणे तेमिथ्या गुण ठाणे ॥ १ ॥

इस गुणस्थान पर जीव १२० प्रकृतियों में से ११७ काबंध १२२ मे से ११७ की उदय उदीर्णा और १४८ की सत्ताधारण करता है

इस्की स्थिति इस प्रकार है।

१ अनादि अनत-अभव्य आश्रीय

२ अनादि सांत-भव्यके अनादि मिथ्यात्व आश्रीय

३ सादिसात–जव्यके सादि मिथ्यात्व श्रश्री
य जानना

॥ दूसरास्वादन गुणस्थान ॥

सास्वाद न याने सम्यक्त केस्वाद करके सहितहो।
जवजीव उपशम समकित पाकर उपशम श्रेणी-
द्वारा ११में गुणस्थानसें पुन गिरताहै तव मिथ्या
त्वमे पहु चनेके प्रथम २ तकजो भावरहतेहैं वेमि
श्रगुणस्थानसे कुछन्यून तथा मिथ्यात्वगुणस्थानसे
कुछऊंचेरहते हैं सववजसको दूसरा गुणस्थानक
होगया कारणकी यहगुणस्थान उपसमसमकि-
त से लब्ध मान होता है वास्ते प्रथम उपसम
समकितका किं चितमात्र स्वरूपवतायाजाताहै।

जव्य जीवमें जो अनादि कालका मिथ्यात्वजरा
हुवाहै वहकारण पाकर ग्रथीजेदमें प्रवेश होने के
समयरूप उपसमजाव लाकर कर्मकि प्रकृति जव

कीउपसमाता है (ढकताहै) तव उसे उपसम स
म्यक्त कीप्राप्ति होतीहै।

उपसम सम्यक्तके २ भेद होतेहै १ अतर करण–
उपसम २ स्वश्रेणीगत उपसम।

१ अतर करण उपसम–आठवे गुणस्थान मे
ग्रथी भेदके वख्त प्रकृतियोको उदीर्णा व उदय में
नहीं आनेदेता है। यह उपसम एकवरतही
आता है।

२ स्वश्रेणी गत उपसम.–उपमम श्रेणी पाकर
मिथ्यात्वादि कर्मकी प्रकृतियों को उपसमाता है।
उपसम समकित पाने के पश्चात् जीव कषाय
चतुष्कमे से किसी कीभी किंचित् उदीर्णा करता
हुवा ठाल्लुपर्वत पर चडकर तात्काल भूमिपर गि
रजाने के सदृश १ समय या ६ आवलिका मे
मिथ्यात्व रूप भूमिपर गिरजाता है। जैसे आमृके

वृक्षपर लगाहुवा फल हवाके वेगसे जूमीपर गिरजाता है तेसेंही आत्मारूप वृक्षपर लगाहुवा सम्य क्तरूप फल मोहरूप वायुके लगजानेसें परि णामरूप शाखा परसें मिथ्यात्वरूप जूमिपर जब गिरजाता है तो उसके अंतरकाल कों सास्व- दन कहते है

इस इसगुणस्थान में १०१ का बंध १११ की उदय उदीर्णा १४७ की सत्ता होतीयै

इसकी जघन्यस्थिती १ समय उत्कृष्ट ६ अत्ताव- लिका की होतीहै

॥ तृतीय मिश्रगुण स्थान ॥

दर्शन मोहनीय प्रकृतिरूप मिश्रकर्मोंदय सें जीवमें एकही काल में सम्यक्त, मिथ्यात्व अंतरमुहूर्त्त पर्यंत समजाव रहै सो मिश्र गुणस्थान है ।

जैसे घोडी और खर के सयोग से दोनो रूप लिये हुवे खच्चर होता है तथा दधी और मिश्री के मिलने से खटास और मिठास लिये हुवे श्रीखरू होता है तैसेही सम्यक्त मिथ्यात्व लिये हुवे जीव मिश्रगुणस्थान वस होता है ।

इसके भाव सुदर्शन तथा कुदर्शन दोनो पर सम रहते हैं तथा स्थिर चित्तीनहीं रह ताहै इस पर एक दृष्टात लिख दिखाता हू । उज्जैनी नगरी मे शेखसल्ली नामक पुरुप निवास करता था वह हमेशा आनंद मे मग्न रहता था, जो पुरुप जैसा कहवे वैसाही मजूर कर लेताथा

एक समय ग्रमानुग्राम विहार करते हुवे धर्मघोपाचार्य का उज्जैनी नगरी के बाहिर उद्यान में पदार्पण हुवा ।

यह वार्त्ता श्रवण कर सर्व श्रावक श्राविका उनके दर्शनार्थ जाने लगे

उसही समय में बाजार में बैठेहुवे शेखमल्ली को लोगोनें कहा " हे भाई आज महान् पुण्या त्मा का पदार्पणहुवा है सो तुभी दर्शनोंको चल" यहबात सुन ज्योंही वह जानेकों तैयार हुवाकी एककिसी मिथ्यात्वी नेकहा "हेशेखमल्लीतूमूर्खतोन हीहुवा है ? मलीनगात्र व कपडे वालोंकें पास जा नेसे तुके क्यालाभहोगा" यहसुन वह पुरुष रुक गया

तात्पर्य की जैसे इसपुरुष के परिणाम अच्छेवुरे दोनोंही थे वैसेही मिश्रगुणस्थानवर्त्ति जीवके होतेहैं

इस गुणस्थान वाला जीव सम्यक्तके सन्मुख होनाचाहताहै परतु मिथ्यात्व वशहोनहीं सक्ता- इसगुणस्थान वाला जीव नतो मृत्युको प्राप्तहो- ताहै नआयुष्य काबधनकरताहै, यहासे पडेतो पहि- ले जावे और चडेतो चोथे जावे ।

नोटः—

इसगुणस्थान के मुताबिक बारहवें तहरवें वाला जीव भी उपरोक्त दोनो बाते नहीं करताहै.

इसगुणस्थानमे ७४ काबंध १०० की उदय उदीर्णा ओर १४७ की सत्ता होतीहै ।

इसकी स्थिती जघन्य तथा उत्कृष्ट अंतरमुहूर्त्तकी होतीहै ।

चतुर्थ अविरती सम्यक्त्व गुणस्थान

इसगुणस्थानपर आतेही जीवको शुद्धसमकितकीप्राप्तिहोजातीहै। प्रसगा नुसार क्रमश. सम्यक्तका किंचित् स्वरूपकहतेहै ।

(श्लोक)

यथोक्तेपुचतत्वेपु, रुचिर्जीवस्यजायते ॥

निसर्गाडुपदे शाद्वा, सम्यक्तच वृत्त उच्यते ॥ १ ॥

अर्थ –सञ्ज्ञीपंचेंद्री भव्यजीको सर्वज्ञप्रणीत आप्तवचन पर रुचि निसर्गसे याने पूर्वभवके अभ्यासविशेष से निर्मल भावकरके अथवा गुरुउपदेश करके जोप्राप्तहोवे उसे सम्यक्त्वश्रद्धानकहतेहैं।

इसगुणस्थानवर्त्ति जीव सुदेव सुगुरु औरसुधर्मपर पूर्णत श्रद्धारखताहै तथा कुदेव कुगुरु औ कुधर्मको सर्वथात्याग देताहै।

इसगुणस्थान पर जीवके अप्रत्याख्यानीय क्रोध, मान माया और लोभके उदयसें वृत्त नियमादिकोंका अभावरहताहै, केवल सम्यक्तमात्रप्राप्त होताहै कारण इसको अविरतिसम्यक्त्गुणस्थानकहतेहैं।

जिस प्रकार सुदर कुलमें उत्पन्न हुवा प्राणी। दुष्टों

की संगत से द्यूतादि व्यसनो में लग जाता है ओर उस कुलके दृढ ससर्गसे कुव्यसनो को छोरु सुव्यसनो में प्रवृत्त होनेकी अजिलाषा करते हुवे जी कुष्टोका पूर्ण जोर होने से छोरु नही सक्ता तैसे ही सम्यक्त पाकर यद्यपि इस गुणस्थान वाला जीव वृत्तिरूप सुव्यसनोकों अङ्गीकार करनेकी अजिलाषा करता है तदपि द्वितीय कषाय चतुष्क के उदय से करनहीं सक्ता.

यदि इस गुण स्थानपर क्षायक जावसें चरुतो अननानुवधी क्रोध, मान माया, लोज, सम्यक्त मोहनीय, मिश्रमोहनीय औरथ्यात्व मोहनीय को-क्षपाकर आगे चरुतेहें। यदि अन्यजावो से चडे तो तदाश्रित कृत्य करते हे

इन प्रकृतियो के आश्रय ९। भॉगे होतेहै।

उपरोक्त सातमें से –

(१) ४ खपावे श्रोर तीन उपशमावे तो, क्षायोपसम समकित कहा जावे।

(२) ५ खपावें श्रोर दो उपशमावे तो, क्षायोपसम समकितकहाजावे

(३) ६ खपावे श्रोर एक उपशमावेतो, क्षायोप सम समकितकहाजावे

(४) ४ खपावे २ उपशामावे श्रो एक वेदेतो, क्षायोपशम वेदकसम कितकहाजावे।

(५) ५ खपावे १ उपशमावे एकवेदेतो, क्षायो- पशम वेदकसमकितकहाजावे ।

(६) ६ खपावे और १ वेदेतो, क्षायक वेदक सम कित कहाजावे

(७) ६ उपशामावे और एक वेदेतो उपशम वेदक द्मसमकित कहाजावे ।

(८) ७ खपावे तो क्षायक समकितकहाजावे

(९) ७ उपशमाते तो उपशमसमकितकहाजावे। जिसप्राणीकों इस गुणस्थानकी प्राप्तिहोजातीहै उसको निम्नलिखित् पाचलक्षण स्वयमेव आ जाते है ।

शम —चौराशीलक्षजीवायोनी पर शमभाव र-खना अर्थात् राग द्वेष रहित पनसे सवो के साथ मित्रता रखना ।

सवेग.—देवओरमनुष्यके सुखको सुख न माने, ससारकों उपाधी माने, आत्मा जितनी कपाय प्रकृति से मुक्त होवे ओर निज गुण प्रगट होवे

उतनासुख माने तथा केवलमुक्तिकी अभिलाषा रक्खे सो संवेग लक्षण वान प्राणी है।

निर्वेद —ससार में रहता हुवाभी नित्य प्रति दीक्षा ग्रहण करने का विचार करे तथा ससारको केवल मात्र कारागृह माने

अनुकपा —दुःखी जीवों के दुःख दूर करनेका उद्यम करे, इस द्रव्य अनुकपाके अतिरिक्त ससार मे परिभ्रमण करतेहुवे जीवोंपर उपकार दृष्टिसें उपदेश करके वैराग्य लाने रूप भाव अनुकपाभी करे।

आस्तिक्यता —जिन राजके वचन पर आस्ता रक्खे, क्योकी जिनेश्वरदेव रागद्वेपरहितहै वास्ते उनके वचनभी रागद्वेप रहित है और उनके प्ररूपित आगमभी सत्यहैं तथा शकाकरकेरहितहैं। उपरोक्त ५ लक्षणोवाला अवश्य समकिती होताहै।

आस्तिक्यता एक ऐसी ची जहै की जिससे जीव अचिरात ससारसे पारहोजाताहै इसपर आप कों प्रदेशीराजा का दृष्टातथो ऱेमेंही लिखदिखाताहु,

प्रदेशी राजा को नास्तिक की सगतहोजाने से वह जीव और शरीर भिन्ननहीहै अर्थात् एकहै ऐसामानताथा, परतु पूर्व पएयोदयसें श्रीपार्श्वनाथ स्वामिके सतानिये श्रीकेशीकुमारजीकेउपदेशसें उसने सम्यक्त धारणकर आस्तिकपदको प्राप्तकिया। उनमहानुभावोंके जो प्रश्नोत्तरहुवेसो "श्रीरायप्रसेणीसूत्र " मे विस्तार सें वर्णन किये है परतुभव्यजीवोकेलाभार्थ यहांपरउनमेसें कुछउधृत करताहु

शितांबिका नगरी के अदर प्रदेशी राजा राज्य करताथा उस्केचित्रसार्थी नामक मत्रीथा, राजामिथ्यात्व धर्मको पालन करताथा खासकर जीव और शरीरको एकही माना करताथा। मत्री दृढ जैन धर्म्मीथा।

इसप्रदेशी राजाने एक दिन अपने मत्रा को अ-पने मित्र सावछी नगरीके राजाके पासभेटना लेकर भेजा मत्री भेटना लेकर सानद पहुचा

उसी अवसरमें पार्श्वनाथ स्वामी के सतानीये केशीमहाराजका शुभागमनहुवाथा

उनके दर्शनार्थ हजारों मनुष्य जारहथे, इस मत्री ने भी गुरुआगमनके आनंदित समाचार सुन दर्शनार्थ गया

अवसरज्ञ गुरु महाराजने धर्म देशना आरंभकी सर्व भव्यात्मा अमृतमय वाणीका पानकर सुख सागरमें गोतालगाने लगें, वादस्वस्वस्थानों पर प्राप्तहुवे

इस अवसरमें उसमत्रीने यहप्रार्थनाकी कीहे ना थ ? शिताविका नगरी में पदार्पणहोतो अधिकाऽ धिकलाभहे राजा सर्वथामिथ्यात्व धर्मको पालन करताहै

गुरुमहाराजने " जैसीस्पर्शाना होगी सोसही " ऐसा उत्तर प्रदान किया

मन्त्रीने प्रार्थनाकी कि हेनाथ ? यदि पधारे तो गावके बाहिर एक शोभनिक वाटिका (वगीचा) है वहाँ पर विश्रामलेने की कृपाकरे इत्यादि विनन्ति-करताहुवा वंदना नमस्काकरके वहां से प्रस्थानकि-या तथा वहां के राजासे मिलताहुवा अपने नगरको रवानाहुवा

नगर प्रवेग करतेही वगीचेके वागवानको बुलाकर सावधान किया और आज्ञादी की गुरु महाराजके चरणकमल प्राप्तहोनेही हमे शुभसमाचारदेना

कितनेक समय के पश्चात् वह चार ज्ञानकों धारण करनेवाले महामुनिराज अपने ५०० मुनिसमुदायके-साथ शितांविका नगरीकें बहार आराम में समोसरे.

मालीने उन महानुभाव भावके पदा र्पणकरते-

ही मत्री कोवधोपनिकाढी मत्रीने उसपर खुशहो कर वहुतसा पारितोपकदिया

मत्रीने विचाराकी किसीप्रकार राजाकों गुरुमहा राज के पास लेजाना चाहिये

उसीराज्य के अदर किसीएक अन्यदेशसे भेट-से अश्व आयेहुवेथे उनकी परीक्षा नहीं की गईथी, इससवध को स्मरणकर मत्रीनें राजासे प्रार्थ नाकी कि हेनाथ, नूतन घोडेकी परिक्षा करना चाहिये

राजा इस प्रार्थनाकों स्विकार करताहुवा अश्वारूढ होकर हवा खोरी कों मय मत्र्यादिके रवानाहुवा

घुडदोडकराते कराते सूर्य, अपने प्रचण्ड आतापको धारण करताहुवा गगनमण्डलके मध्यभागमे आन-पँहुचा उसके अधिक आतापसे राजाघवराहटको प्राप्तहोगया और अपने मत्रीसे कहनेलगा कि शी-

तलठाया व पवन वाले स्थानपर चलनाहिये उसने क-
हा हेनाथ, अपना बगीचा पासही है वहापर स-
र्व सुखदाई व्यवस्था होजायगी वास्ते वहांपर पधा–
रियेगा

राजाने इस सलाह को अङ्गिकारकर अपने मनो-
हर वाटिकाके अदर प्रवेशकर एकगहरे वृक्षकी
शीतल छाया में विश्राम लिया

इसही अवसर में वे महामुनिराज सिहनाद-
रूप मेघवत् हजारो श्रोता ओंके समक्ष अमृत मय
देशना की वृष्टि कररहेथं।

राजाने दूरसें अवाजसुन अपने अमात्य से पूछा
यहकोनहै, उसने उत्तर दिया हेनाथ जैनके साधुहै.
राजाने कहा क्या ये वेहीहैं जो जीव और
शरीरकों पृथक २ मान तेहैं, मंत्रीने कहा हा हजू-
र येवेहीहैं. राजाने कहा ये लोक महा मिथ्या
त्वीहै, मंत्रिने कहा हे पृथ्विनाथ, उन के पास-

पधारकर हटाना चाहिये राजा इसबातकोस्विकार-कर उस आश्रमपर पहुंचा जहा की वे मुनीराज विराजमानथे, उनकि दिव्य काती कों देख तथा समु-दायकी समस्त शोभाकों देख अद्भुत रस कापान करने लगा।

वहा पर पहुचकर सुयोग्य स्थान पर बैठकर मुनि राजकों प्रार्थना पूर्वक प्रश्नकरनेलागा की क्या आप जीव और शरीरकों अलग २ मानतेहै उन महानुभावने उत्तर दिया हम क्या मानतेहै ऐसेहीहोताहै इसपर जो जो प्रश्नोत्तर हुये वेनीचे लिख दिखाते है

(१) प्रदेशो राजाने प्रश्नकिया है भगवन्, जब की आपफरमाते है की जीव और शरीर भिन्नहै तथाजीव—अपने कियेहुवे कर्मोंको खुदभोगताहै तोमेरापिता, जोकि हिंसकथा, नरकमेजाना चाहिये, परतु आजतक उसने आकर मुझे कुछ-

नी सदेशानही दिया वास्ते वहखुद आकर क
हे तो मालु

यहसुनकर श्रीकेशीमहराजबोले "हेभद्र, तेरी
सूर्यकातानामास्त्रीवस्त्रा नूपणपहिरकर बेठीहो, उ-
सवक्तकोई बदनिगाहवाला पुरुप उसके साथ कु-
कर्मकरे और तू उसेदेखलेवेतो उसको घरजानेदेया
नहीं' ' प्रदेशीराजाने कहा उसकोतो सूली परच-
ढाडु और घर कनी नहीं जानेदू, तब केशीमहा
राजने कहा "जैसेतूउमका विनाशकरे और घर
परनजानेदे वेसेही नरकमेंमे परमाधामीनी आने
क्यों देवें ? और न आने देने कीहालनमे वहीं पर
दु खनोगाकर ताहे'

(२) फिरप्रदेशी राजाने प्रश्नयि किया "मेरेबाप-
कीमाता वहुत धर्मीष्टथी वास्ते आपके कथनानुसार
देवलोकमे जानाचाहिये, मगर अन्नीतक उसने

आकर मुझेसुखके समाचारनहीं कहे वास्ते यदि-वह खुदआकर कहदेवे तवमें जीव और शरीर-कों भिन्नमानलु,,

केशीमहाराजनेकहा, "तूस्नानमजनकरके, सुदर वहुमूल्यवस्त्र भूषण पहिनकरबेठाहो वा पवित्रपूजाके उपगरण लेकर देवपूजा वास्ते जारहाहो, उस-वक्त कोईमनुष्य तुझकोकहेकि इसविष्टाके मकानमे आकर ठहरो, बैठो, सोजाओ तोक्या तू वहाजायगा, " तवप्रदेशी राजाने कहा, " जाना तो दूररहा मगरउसका कथन मात्रभी नहीं सुनु" ऐसासुनकर केशीमहाराजने कहा इसहीं मुजिवे देवलोक के अदर जब देवता उत्पन्न होतेहैं, तब वहाके दिव्यसुख तथा दिव्य भोगके साथ स्नेह ग्रथी वध तीहै तथापि यहा आनेका विचार करताहै कि दोघमी वाद जाउगा लेकिन वहाका आयुष्य लवा होनेसे वहाकी दोघमीव्यतीत होनेमे अपने यहा के दोह-

जार वर्षव्यतीत होजातेहैं, कहो अबकैसे मिलाप-होवे, औरदूसरा सवव यहभीहै कि मनुष्यक्षेत्रमे औदारिक शरीरके सवव से दुर्गंध ४०० या ५०० योजन तक उठलती है इसलिये यहा आनही सक्के वास्तेतेरे वापकी माता कैसे आसके

(३) प्रदेशी राजाने प्रश्न किया, "मैंने एकचौर को लोहेकी मजवूत छिद्ररहित कोठीमे डालकर रक्खाथा, इसपरभी कितनेक दिनके वाद जवकी उसको खोलकर देखीतो मालुमहुवाकी वहचौर मरगयाहै, हेस्वामिन्, यदिजीवशरीरमेसे अलग-थातो वह किसरास्ते वहारगया, वास्तेजीव शरी-रको भिन्नमाननामिथ्या है."

केशीमहाराजने कहा, "सुन, एक किसीवडेम-कानके भूमिगृह (Celler) मेजाकर, सर्वठि-काणेवद करके, ढोलवजावेतो उसका आवाज वहा

र आवे यानही ' प्रदेशीराजाने कहा कि बेशक आ सक्ताहै केशीमहराजवोले "जैसेसर्व छिद्रबदकर- देनेपरभी ढोलकी आवाज वहार आसक्तीहै तैसे- ही सर्व छिद्रबदकर ने परभी जीव बहार जास- क्ताहै „

(४) प्रदेशी राजाने फिरप्रश्नकिया, "मैंनेउसी चौरके कलेवरमे कीरूपढे हुवेदेखे, सोकेहासे आ- ये, "केशीमहाराजने कहा "जैसेलोहेको तपानेसे उसमें छिद्रनही होतेहुवेभी अग्नीप्रवेश होजा- तीहै उसही तरह कलेवरमे भी जीव होजा ते है "

(५) प्रदेशीराजाने प्रश्न किया, "युवान बुद्धि- मान या निरोगी मनुष्य के मुआफिक कोईबाल्य अवस्थावाला बाणलगासकेगाक्या ? अगर शरीर से जीव अलगरहता तो सर्वमेसत्ता (ताकत) बरा-

नरहोनाचहिये मगरवोघातहैनहीं सो वहकैसी-गरवरू ?

केशीमहाराजने उत्तर दिया कि, "हेराजन् ! कोईयुवा पुरुष बलवान होनेपर भी पुरानी कावरूपरभारउठासकेगाक्या ? अर्थात् नहीं उठासकेगा, क्योंकि कावरू टूटजानेका भयरहताहै, उसीतरह जीवके साथशरीरकासंबधहै, मगरशरीर निर्बलहै बाल्यावस्थावत्है सोउससेबाणकैसे लगसके"

(६) प्रदेशी राजाने प्रश्नकिया, "मैने एक (चोरको) जीतेको तोललिया और बगैर शस्त्रके उसकी जाननिकालकर फिरतोला तो वजनमैकुछभी तफावत मालूमनहीं हुवा वास्तेजीव भिन्नहोताती तोलघटजाता"

केशीमहाराजने उत्तरदिया, "एकखाली चमकी धम्मनको तोलकर पीछे उसमे पवनभरके तो-

र आवे यानहीं ' प्रदेशीराजाने कहा कि बेशक आ-
सक्ताहै केशीमहराजबोले "जैसेसर्व छिद्रबदकर-
देनेपरभी ढोलकी आवाज वहार आसक्तीहै तैसे-
ही सर्व छिद्रबदकर ने परभी जीव बहार जास-
क्ताहै „

(४) प्रदेशी राजाने फिरप्रश्नकिया, "मैनेउसी
चोरके कलेवरमे कोडेपडे हुवेदेखे, सोवेकहासे आ-
ये, "केशीमहाराजने कहा "जैसेलोहेको तपानेसे
उसमे छिद्रनहीं होतेहुवेभी अग्नीप्रवेश होजा-
तीहै उसही तरह कलेवरमे भी जीव होजा-
ते हैं '

(५) प्रदेशीराजाने प्रश्न किया, "युवान बुद्धि-
मान या निरोगी मनुष्य के मुआफिक कोईबाल्य
अवस्थावाला वाणलगासकेगाक्या ? अगर शरीर
से जीव अलगरहता तो सर्वमेसत्ता (ताकत) वरा-

ग्रहोनाचहिये मगरवोबातहैनहीं सो वहकैसी–गरवक ?

केशीमहाराजने उत्तर दिया कि, "हेराजन ! कोईयुवा पुरुष बलवान होनेपर भी पुरानी कावरूपरभारउठासकेगाक्या ? अर्थात् नहीं उठासकेगा, क्योंकि कावरू टूटजानेका भयरहताहै, उसीतरह जीवके साथशरीरकासबधहै, मगरशरीर निर्बलहै बाल्यावस्थावतूहै सोउससेबाणकैसे लगसके"

(६) प्रदेशी राजाने प्रश्नकिया, "मैंने एक (चौरको) जीतेको तोललिया और बगैर शस्त्रके उसकी जाननिकालकर फिरतोला तो वजनमेंकुछभी तफावत मालूमनहीं हुवा वास्तेजीव भिन्नहोताती तोलघटजाता."

केशीमहाराजने उत्तरदिया, "एकखाली चमड़े की धम्मनको तोलकर पीछे उसमे पवनभरके, तो–

लकरनेपर जैसे वजनमे कुछभीतफावतनहीं होती तेसेही उसविषयमे समझलो"

(७) प्रदेशी राजाने कहाकी मैने एकपुरुषके शरीरमे सर्वजगह जीवको ढूढामगर कही मालुम नहीं हुवा तत्पश्चात् उसके शरीरके टुकड़े टुकडे करके जीवको देखनाचहा परंतु पतानहीं मिला वास्ते जीवजुदानही है

केशीमहाराजने कहा, "एक पुरुषोकी मन्डली जगलमे गई और रसोईवनाने के हेतुसे लकड़ियोके टुकड़े २ करके अग्नीको खोजी मगर कहीं पतानहींलगा तबनिरास होकरबैठे, उनमेसे एक बुद्धिशाली पुरुषने लकडी के दोटुकड़े को आपुसमे घिसकर उनमेसे अग्नी पैदाकरली इसही तरह ज्ञानी पुरुष जीवको देखसक्ताहे छद्मस्तनहीं देखे.

प्रदेशी राजानेकहा, "येदृष्टात वतलाए, मगर ज
वप्रत्यक्ष पनसे जीवको हाथमे पकड वतलायाजाय
तव मै मानू ,,

केशी महाराजने उत्तर दिया, "येदरख्तके पत्ते
किस सववसे हिलते है ? क्याकोई देवहिलाताहै ?
"प्रदेशी राजाने कहा कि पवनसे हिलतेहै " तव
केशीमहाराजने कहाकि पवनको तू देखसक्ताहै
क्या, ? "प्रदेशी राजाने कहाकी नहीं "

तव केशीमहाराजने कहा, "जेसे पवन अदृश्य
होने परभीपत्तोके हिलनेसे,अथवा स्पर्श होनेसे मान
लिया जाताहै, तैसेही जीव लक्षणसे मालुम हो-
ताहै, केवलज्ञानी महाराज प्रत्यक्ष देखसक्तेहैं
इसतरह युक्तिवाले प्रश्नोत्तर होनेसे प्रदेशीराजाने
नास्तिक मतको छोडकर जीवादिक नवतत्वकी श्र-
द्धाकरके श्रावकके व्रत अङ्गीकार किये

इसप्रकार बहुत प्रकारके नास्तिक वाद शास्त्रोंमे निराकरण किये हुवेहैं

सम्यक्तधारी पुरुष कभी खडनमंडनादि झगडोंमें पडकर अपना वृथासमय नहीं खोते हां अलबत्ता सत्यमार्ग बताने की कोशीस जुरूर करतेहैं, मगर निंदा किसी की भी नकरे देखिये श्रीमान् यशोविजयजी उपाध्याय फरमातेहैं "दर्शन सकलन येग्रहे" यानि जोदर्शन वाले जिस २ नयसें धर्मा राधन करते हों उन २ नयों के विचारमें लगा आप सातोंन यों पर कायमरहे

जैनदर्शन मे भी पचम कालके प्रभावसें कदापि गच्छादिसवन्धी क्रियाकाडमें फेरफार मालुमपडेतो भी मध्यस्थ दृष्टिरखे किंतु अभिनिवेशिकके आधिननहो

वादविवाद करनेसे सन्मुख वालेको अगर

गुणकी प्राप्तिहो अथवा जैनशासन की जयहोतो करना उत्तमहै वरना वृथा कष्ट न उठावे क्यों की श्रीहरिभद्रसूरिजी महाराजने अपने अष्टकमे ऐसा-वाद करना मनाफरमाया है

इसगुणस्थानीय जीवको यद्यपि वृत्तिका अभाव होता है तदपि देवगुरु और सघकी भक्ति करने में तन्मय रहता है

इस गुणस्थानपर ७७ प्र० का बध १०४ कीउदय उदीर्णा तथा १३० की सत्ता होती है

इसको स्थिती जघन्य अतरमुहूर्त्त की तथा उत्कृष्ट ६६ सागरोपम और ४ पल्पोयम की होती है, वह इस प्रकार है —

एक मनुष्यभव तथा एक देवभव इस प्रकार चार मनुष्यभव और ३ बारहवे देवलोक केभवमे इसही गुणस्थान से रहता है

पंचम प्रमत्त (देशविराति) गुणस्थान.

जीव सम्यक्तावबोध जनित वैराग्यके उपचयसे यद्यपि सर्वविरतिकी वाँछा करता है परतु सर्वविरति घातक प्रत्याख्यान चतुष्क का उदय होने से कर नहीं सक्ता परतु जघन्य, मध्यम और उत्कृष्ट पन से देशविरतिपनही प्राप्त कर सक्ता है उपरोक्त तीनों देशविरती की किंचत् व्यख्या करते हैं

॥ जघन्य ॥

स्थूल हिंसाका त्याग कर परमेष्टिमंत्र मात्रका स्मरण करता है कहा है

॥ गाथा ॥

आउट्टी थूलहिंसाई । मज्जमसाई चाइओ ॥
जहन्नोसावओ होई । जोन मुक्कार धारओ ॥१॥

॥ मध्यम ॥

न्याय सपन्न निर्वंद्य व्योपारादिकार्यकरना, गृह-स्थोचित्त षट् कर्म नित्य करना द्वादश व्रत्त पालन करना यथा –

॥ गाथा ॥

धम्मजुग्ग गुणड्ढो । छकम्मो बार सव्वओ ॥
गिहत्थोय सया यारो । सावओ होई मज्झिमो ॥२॥

॥ उत्कृष्ट ॥

सचित्त का त्यागी, नित्य एकाशन करने वाला अर्निद्य सदाब्रह्मव्रत्त पालन करनेवाला समय पाकर गृहस्थके कार्य छोड़ श्रमणोपासकनित्यरहवे यथा –

॥ गाथा ॥

उक्कोसेण उतुसड्ढोउ । सचित्ताहार वज्जओ ॥
एगासणग जोईअ । बभयारी तहेवय ॥ ३ ॥

की सच्चसा ज्ञातहो, ऐसाहि बुलावे तथा बोलते को अनुमोदन कर खुस होवे

३ चौर्यानद –चौरीकरेया झाकाझाले, झलावे तथा झालते को अनुमोदन कर हुल्लसित होवे

४ परिग्रह रक्षणानद – परिग्रह वढानेकीइछा-करे, करावे तथा अनुमोदन करता हुवा आनद माने

उपरोक्त चारोंपाये नरकगतिके दाताहैं त-था पहिलेसें पाचवेगुणस्थानतक एवम् कोई २ जीवके प्रथम पाया छठेतकभीरहता हैं

इसगुणस्थानवर्त्ती जीव वारहव्रत उत्तमरीतसें पालन करता है

वारह वृत्तोंका किंचित् दिग्दर्शन

प्रथमही प्रथम सम्यक्त वृतलेवे, उसमे कुदव,

गुरु, और धर्म सर्वथा त्यागकरे,सातक्षेत्रमे द्रव्य-निकालने की मर्यादाकरे नित्यप्रति उचित प्रत्याख्यान का बधानकरे

अवक्रमश वारहवृत्तोंका किंचितूस्वरुप लिखते हैं

(१) स्थूलप्राणातिपातविरमण -- त्रसजीवों की जानबूझकरहिंसा नकरे, तथा स्थावरोंका पूर्णत वनता उचित उपयोगरक्खे

(२) मृषावाद विरमण । पाचवड़ीझूठ १ कन्यासवधी २ गौसबधि ३ भूमिसबधि ४ थापण--मोषामे ५ कूड़ीसाखसबधीझूठ नबोले, और सा--मान्यझूठका उपयोगरक्खे,

(३) अदत्तादान विरमण- ऐसीचौरीनकरे की जो लोगोंमें निदनीकहो, राजादिसे दंडमिले यथा झाकाझाखना, खातपाड़ना, खीसाकाटनादि और समान्यचोरीमें भी उपयोगवंतहोवे

(४) मैथुनविरमण परस्त्रीआदिकों सवर्था त्यागकरस्वस्त्रीकी मर्यादाकरे

(५) परिग्रहविरमण धनधान्यादि नवविध परिग्रहकी मर्यादाकरे

(६) दिग्व्रत्त दशोंदिशी, विदिशीमे आवागमनका प्रमाणकरे,

(७) भोगोपभोगविरमण बावीसअभक्ष २२ अनतकाय ३५ कर्मादानादिका त्याग या मर्यादाकरे

(८) अनर्थदंड निरर्थकर्मका त्यागकरे, यथा कुत्तेबिल्लीपोपटादिकों पालना, तथा लडतेहुवे जानवरोंको या मल्लों वगेरा को देखना

(९) सामायक नित्य या गिनती की सामायककी मर्यादाकरे

(१०) देशावगासिक चउदहनियमचितारे, तथा तीनसामायकादिकाल पर्यंत वृत्तिमेंरहे

(११) पौषधवृत्त वार्षिक चौप्रहर या अष्टप्रहर पौषधकनेकी मर्यादाकरे

(१२) अतिथी सविभाग हरसाल योगवाई होतेहुवे साधुसाध्वी कों या श्रावक श्राविकाओं को दानदेनेका बंधानकरे

इसप्रकार बारहव्रतग्रहणकरे उसमें उत्कृष्ट, मध्यम और जघन्य तीनप्रकारसे होतेहैं तथा विशेषविधि गुरुगम्यतासें जानना

इसगुणस्थानवर्त्ती जीव चार व बारहभावना भाताहै

यथाः—

॥ चार भावना ॥

(१) मैत्री भावना उसेकहतेहैं कि एकेंद्रियसे लगाकर पचेंद्री तक सर्वजीवोंपर मित्रतारखके, परतु कर्मकेवश अलग २ जातिके होगयेहैं वास्ते-

क्रिसी जी जीवपर द्वेषजाव न रक्खे सर्वजीवसुख के अजिलाषीहैं वास्ते जीवोंको सुखी करनेकी जा वना अहोरात्र वनीरक्खे

(२) द्वितीय प्रमोद जावना उसेकहतेहैं, कि, साधु, साध्वी, श्रावक, और श्राविकाओंको देखतेही हर्षित होजावे, ऐसेपुरुषके सयोगकी सदाइछाकरे, किसीवक्तजी वियोगनहो ऐसीजाव-नाजावे

(३) तृतीयकरुणा जावना उसेक्हतहै कि, सर्वजीवोंपरदया जावरखके कोईजीवकोदु खीदे-खतोउसको सुखीकरनेकी जावनारखे दयाकरनेके समयमे स्वधर्मीपरधर्मीका विचारकरे

(४) चतुर्थ मध्यस्थ भावना उसकहतेहैं कि पापिष्ट जीवपर जी रागद्वेष नकरे रागकरनेसे आतेजन्ममें पापिष्टकासयोग प्राप्तहोताहै और द्वेषकरनेसे दु ख प्राप्तहोताहै वास्ते पापिष्ट जीवको-

समझासके ऐसीशक्तीहोतो समझादेवे और नसमझेतोभी उसपर द्वेष नलावे

॥ बारह भावना ॥

॥ प्रथम अनित्यभावना ॥

पहिली अनित्यभावना ---शरीर, धन, कुटुंब, ये सर्वपदार्थअस्थिरहैं जहांतक इन वस्तुओंकेरहनेका संयोगबाधाहै तहांतकरहेंगी ये वस्तुए कायमरहने कीनहींहै वास्ते अस्थिर पदार्थों पर राग करना सो कर्मबंधनकाही कारनहैं गतजन्मोंमें ऐसे अनित्यपदार्थोंपररागधारनकियाथा वास्ते अनेकजन्ममरण सहनकरनापडे हेचेतन ! तुमदेव नित्यहैं तेरेस्वभाविकगुणभी नित्यहैं और आत्माका सुखभी नित्यहै वास्ते उनको छोडकर इसअनित्यपुद्गलमे क्यों मग्नरहताहै ? जितनेससारिकसुखहैं उनमें उनके साथहीदु ख रहताहै, फिरकालातरमें नरकादिकदु खसहनकरनेपडतेहैं वास्तेजडपदार्थोंपर रागद्वेष

करना ठीकनहीं, जहातक अनित्यपदार्थोंसे रागद्वेपदूरनहीं हुवाहै तहातक नित्यसुखप्राप्तहोनेका हीनहीं वास्तेहेचेतन ! नित्यसुखप्राप्तहोने ऐसा उद्यमकर, यहभावना भरतचक्रवर्त्तिनेभाईथी

॥ द्वितीय अशरणभावना ॥

इससंसारमें मेरेशरणभूत कोइभीनहीहै जिन २ लोगोकेवास्ते मैं पापकरताहु वे उनको सहनेकी-वक्तमे मेरेसाथनहीं होंगे मगर मुझअकेलेकोही वहदुःख सहनाहोगा वास्ते हेचेतन ! तू अज्ञानतासे कुटुंबकेलिये अनेकपापारंभकरताहै सोठीकनहीं, तू तेरेआत्माकेस्वभावका विचारकर, औरज्यो बनेत्योंवि भावकात्यागकर, बडे २ राजाओंकोंभीदुःखसेकोईछु-डानेवालानहींहै, नरकके अंदर विचित्रदुःखभोग-नापडेगा ऐसाविचारकर मोहमें दिग्मूढनहो, यहभा-वना अनाथीमुनिने भाईथी

॥ तृतीय संसार भावना ॥

ससार मे सगेसबधि जो मिलेहै वे सर्व अपने स्वार्थकेसाथीहैं, जिनको तू मेराकरकेमानरहाहै वेस्वार्थसिद्धहोनेपरतेरे से निगाहतकनही मिलावेगे यदि सुखचाहेतो केवलसमता भावरख यहभावना शालिभद्रजीनेभाईथी

॥ चतुर्थ एकत्व भावना ॥

आत्मा अकेलाही आयाहै और अकेलाही जायगा, स्वजनादि कोइभी सग आनेवाला नही है वास्ते जडपदार्थोंपर मोहकरना सो केवलदु ख का साधनहै, जो २ दु ख पडतेहै वे सर्व परस्मणताके फलहैं, हेचेतन ! एक आत्मस्वरूपके स्वभावमेरहना यहतेराकर्तव्यहै यहभावना नमिराजऋषीजीने भाईथी

॥ पंचम अन्यत्व जावना ॥

६ द्रव्यो मे केवल आत्मा "चेतन" पदार्थहै वास्ते अन्यजड द्रव्यों से मे अलगरहू, तदपि वस्तुत मेरेनहीहै, यहजावना मृगापुत्रजीने भाईथी.

॥ षष्ठम अशुचि जावना ॥

यहशरीर मलमूत्रसेजराहुवाहै, यदि ऊपरसेचमडा लगाहुवा न होतो महाजयदायक मालूमहोता-है, हेचेतन, शरीरकेनवद्वारोमेसे नित्यप्रतिमलवहनहोताहै, मोतूप्रत्यक्षदेखताहुवाजी क्यों वैराग्य को प्राप्तनहींहोता, तूप्रथमऐसेस्थानमे पैदाहोनाहै जो-किसवंसे घृणित्वहै, वहापरमातपिताके वीर्यका पान करके तैरा शरीरवढताहै, वास्ते हेचेतन तू ! ऐसे-अशुचि शरीरपुन धारन न करेऐसाउद्यमकर यहजावना सनतकुमारजीनेजाईथीन.

॥ सातमी आश्रव भावना ॥

मेरी आत्मा चिदानंदमयहै । लेकिन मिथ्यात्व, अव्रत, योग, और कषाय करके प्रवर्त्ततीहै वास्ते समह २ में नये २ कर्मआतेहैं और उसहीसे मलीनता पैदाहोतीहै वास्तेहेचेतन । इनकामोंकोरोक.
जितने २ ससारी सवधहै उतने २ सर्वआश्रव-आनेके कारनहै समय २ मे पौद्गलिकपदार्थों पर-रागकरना यहकेवलकर्मबंधनकाहेतुहै

कर्मबंधनके बीजभूत रागद्वेषकी प्रकृतियेंहैं औ-र उनके कारनसे शरीर, पुत्र, स्त्री, धन, मकान, अहंकारपैदाहोतेहै पुन २ यहमनुष्यजन्म मिलनेका नहीहै वास्तेहेचेतन । ज्योंबनेत्यों पुरुषार्थको का-ममे लाकर आश्रवकी प्रकृतीयें बंधकरनेकाउपाय-कर, यहभावना समुद्रपालजीनेभाईथी.

॥ आठमी संवर भावना ॥

समय१ मे जो कर्म जीव बांधतेहैं वे इससे रुकजातेहैं सवरभावके सतावनरास्तेहै ५ सुमति ३ गुप्ति २२ परिसह १० विधयतिधर्म १२ भावना ५ चारित्र हेचेतन ! तू उपरोक्त सवरके कारणोंको अंगीकार करले जिससेकि कर्मनआसके जवतक सवरभावना नहीभावेगा तवतक आत्माकाकार्य सिद्धहोनेकानहीं और भवभ्रमण भी मिटनेकानहीं इसप्रकारसे सवरभावना भावे यहभावना केशीगौतमजी नेभाईथी

॥ नवमी निर्जरा भावना ॥

पूर्वके कर्मोंकी निर्जराकरनेके भावोंको यहही उत्पन्नकरतीहै इसकेदोभेदहोतेहैं तद्यथा – अकामनिर्जरा और सकामनिर्जरा

अकाम निर्जराके वशसे प्राणी कि स्थिति ज्यों २ परिपक्क होतीजाय त्यों २ उपरचढतेजाते हे, अगरइसपरकोई प्रश्नकरेकी यहवात असत्तवतुल्याहे वास्ते कोईदृष्टांतदेकरवताओ. यथा- कोईभी पत्थर जोकी साफन हो, नदीमे डालदेनेके पश्चात् कालांतर करकेसाफहोजाताहै, तैसेही अकाम निर्जराकेवशसे प्राणी अपने आपउच्चस्थितिको प्राप्तहोताहै.

सकाम निर्जरा

इससे जीव तपश्चर्यादि व्रत करके उच्च स्थिति को प्राप्तहोता है. यह निर्जरा सिवायसज्ञी पचेंद्रि के कोई नहीं कर सकता है, इस निर्जरा को बारह प्रकार के तपकरके आदरकीजाती है, उन तपों के नाम

नवकारसी, पोरसी, आदि १० प्रकारकी तपश्चर्या करना उणोदरीतप, भोजनादिकमे एकदो ग्रास कम लेना, वृत्तिसंक्षेपतप रसत्यागतप.

सर्ववस्त्राभूषण अथवा अन्यचीजोका संक्षेपकरना रसत्यागतप सर्व या एक दो विगयों का त्याग करना, काय क्लेश तप–शरीरको कष्टदेना जैसे लोचादिकरना, अथवा सूर्यका आतापलेना संली नतातप अंगोपांग संकोच केररक्खे तथा इन्द्रिये और कषायों को वशमेरक्खे

अभ्यंतरतप, प्रायश्चिततप, मे जो२ दूषणलगेहो उनकीशुद्धमनसे गुरुके पाससे आलोचनालेवे, विन यतप देव गुरु और ज्ञानका विनय तथा वेया-वच्चकरना, स्वाध्यायतप, वाचना, पृच्छना, परा वर्त्तना अनुप्रेक्षा, तथाधर्मकथा करना ध्यानतप, धर्मध्यान तथा शुक्लध्यान, ध्याना काउसग्गतप–कायाको एकजगह स्थिर रखकरअभ्यतरगमें जिनेश्वरभगवान के गुणग्रामकरना इसप्रकार बारहतरहकेतप–स-मभावसे करूगातो मैरेपूर्वके कियेहुवे कर्मकि नि र्जराहोगी, यहभावना अर्जुनमालीजोनेभाईथी

॥ दसमी लोकस्वरूप भावना ॥

उर्ध, अधो, और तिर्छालोकमें सातराज रहेहु-वेहैं, उनके भीतर नीचेके सातनारकीके जीव त-था कहीं २ भुवनपति और व्यतरीकभी रहते हैं, तिर्छालोकमे मनुष्य, तिर्यंच, और व्यतर के स्था-नहै, उपर के सातराजों के उपर सिद्धमहाराज निर्मलसिद्धशिलाके अग्रभागपर विराजते हैं त-था उनके उपर अलोकहै. यहभावना शिवराज ऋपिजीनेभाईथी

॥ इग्यारमी बोधबीज भावना ॥

जीवने समकितनहीं पाया वास्ते चारगतिमे भ्र-मणकरना पड़ा । वस्तुको अवस्तुपनसे मानलीहै वास्ते हेचेतन ! कुछपुण्यके योगसे मनुष्यजन्म-मिलाहै तथा साधकी सामग्री भी प्राप्तहुईहै सब तत्वातत्वकाविचारकर आत्मातथा पुद्गलको

सर्ववस्त्राजूषण अथवा अन्यचीजोंका सक्षेपकरना रसत्यागतप सर्व या एक दो विगयों का त्याग करना, काय क्लेश तप–शरीरको कष्टदेना जैसे लोचादिकरना, अथवा सूर्यका आतापलेना सलीनतातप अगोपाग सकोच केररक्खे तथा इन्द्रिये और कषायो कों वशमेरक्खे

अन्यतरतप, प्रायश्चिततप, मे जो२ दूषणलगेहो उनकीशुद्धमनसे गुरुके पाससे आलोचनालेवे, विनयतप देव गुरु और ज्ञानका विनय तथा वेयावच्चकरना, स्वाध्यायतप, वाचना, पृच्छना, परावर्त्तना अनुप्रेक्षा, तथाधर्मकथा करना ध्यानतप, धर्मध्यान तथा शुक्लध्यान, ध्याना काउसग्गतप–कायाको एकजगह स्थिर रखकरकअतरगमें जिनेश्वरजगवान के गुणग्रामकरना इसप्रकार वारहतरहकेतप–सजावसे करुगातो मैरेपूर्वके कियेहवे कर्मकि निर्जराहोगी, यहजावना अर्जुनमालीजीनेजाईथी

॥ दसमी लोकस्वरूप जावना ॥

ऊर्ध, अधो, और तिर्छालोकमें सातराज रहेहु-येहैं, उनके भीतर नीचेके सातनारकीके जीव त-था कही २ जुवनपति और व्यंतरीकजी रहते है, तिर्छालोकमे मनुष्य, तिर्यंच, और व्यंतर के स्था-नहै, उपर के सातराजों के उपर सिद्धमहाराज निर्मलसिद्धशिलाके अग्रजागपर विराजते हैं. त-था उनके उपर अलोकहै यहजावना शिवराज ऋषिजीनेजाईथी.

॥ इग्यारमी बोधवीज जावना ॥

जीवने समकितनहीं पाया वास्ते चारगतिमे ज्र-मणकरना पमा । वस्तुको अवस्तुपनसे मानलीहै वास्ते हेचेतन ! कुछपुण्यके योगसे मनुष्यजन्म-मिलाहै तथा साधकी सामग्री जी प्राप्तहुईहै सब तत्वातत्वकाविचारकर आत्मातथा पुद्गलकों

दानंचेति गृहस्थाना। षट् कर्माणि दिनेदिने ।२।

इसगुणस्थानवर्त्ति जीवके ६७ प्रकृतिकाबध तथा ८७ की उदय उदीर्णा तथा १३८ की सत्ता-होतीहै.

इसकी स्थिती जघन्य अतर्मूहुर्त्त तथा उत्कृष्ट देशन्यूय (८ वर्षन्युन) पूर्वकोडीकी होतीहै,

इसके वादसातगुणस्थानो की समान स्थिती हो-तीहै तद्यथा

(श्लोक)

अत परप्रमात्तादि सप्तगुस्थानके ॥
अतर्मुहूर्त मेकैकं प्रत्येक गदिता स्थिति ॥ १ ॥

भावार्थ— इसके वादप्रमतादि सातगुणस्थानों की स्थिती उत्कृष्ट अनर २ मुहूर्त्त की तथाजघन्य एक २ समयकी होती है

॥ षष्टम सर्वाविराति (प्रमत्त)
॥ गुणस्थान ॥

इसका अधिकारी अणगार माधूहोता है यह-
मुनिराज पचमहाव्रतपालक छकायरक्षक माधूक-
री भिक्षाकाभोगी होताहै

विषययोग समझकर इसस्थानपर पाचोमहाव्र-
तों की व्यवहार तथा निश्चयसें व्यारयाकरतेहैं

॥ अहिंसा महाव्रत्त ॥

व्यावहार —त्रसस्थावर जीव की हिंसा करेन-
हीं, करावेनहीं करते को अनुमोदे नहीं मन, व-
चन और कायाकरके

निश्चय — रागद्वेप करके अपनी आत्माकों न-
हने (मलीन न करे)

२ सत्य महाव्रत्त ॥

व्यवहार - कोई प्रकारका झूठवोले नहीं, वो-लावेनहीं, वोलते को अनुमोदनहीं, मन, वचन और काया करके,

निश्चय- पौद्गलिकवस्तु कों अपनी न कहै,

३ अस्तेय महाव्रत्त ॥

व्यावहार- कोई प्रकार की चोरी करेनहीं, करा-वेनहीं, करतेकों अनुमोदे नहीं, मनवचन और कायाकरके,

निश्चय- आठकर्मों की वर्गणा जोसमय २ में जीवग्रहण कररहाहै सोनकरे यानेसवर ज्ञावर-क्खे, ।

४ ब्रह्मचर्य महाव्रत्त ।

व्यावहार - देवता मनुष्य, तिर्यंच के पुरुष औ-

स्त्रीकें साथ मैथुन सेवेनहीं, सेवावे नहीं, सेव तो को भलाजानेनहीं, मन, वचन, और काया करके

निश्चय - परपुद्गलमे रमणता नकरे,

५ अपरिग्रहमहाव्रत ॥

व्यावहार – कोई प्रकार का परिग्रहरक्खेनहीं, रखावेनहीं रखतेको अनुमोदेनहीं मनवचन और कायाकरके

निश्चय – चौदह्प्रकारका परिग्रह्नरक्खे । मि थ्यात्व २ हास्य ३ रति ४ भय ६ शोक ७ दुगछा ८ पुरुषवेद ९ स्त्रीवेद १० नपुसकवेद ११ क्रोध १२ मान १३ माया १४ लोभ

इनपचमहाव्रत्तोको यदि दोनोप्रकारसें सिद्धक-रलेवेतो निम्नलिखित गुणोकी प्राप्तीहोनीहै

१ प्रथमव्रत सिद्धहोजानेसे हरएकप्राणीके साथ वैरभाव मिटजाता है अथवा उनके अति-शयसे दृष्टीगोचर जीवोका स्वभाविक वेरतकभी नष्टहोजाताहै.

२ दुसरे व्रत के सिद्धहोने से वचनकी सिद्धि होजातीहै

३ तीसरे व्रतके सिद्धहोनेसे नवनिधान प्रकट होजातेहैं

४ चौथे व्रतके सिद्धहोनेसे अनत वीर्यकी प्राप्तीहोजातीहै

५ पचमे व्रतके सिद्धहोनेसे भवभ्रमण कमहोजाताहै

इनके अतिरिक्त एकछठारात्री भोजनवृतहै सो-भोगेनहीं, भोगावेनहीं भोगेते कोअनुमोदेनहीं मन, वचन और कायाकरके.

यद्यपि इसगुणस्थान वर्त्ती मुनि उपरोक्त गुणो-करके सहितहोताहै, तथापि सज्वलन के कषायके तीव्रोदयसें १ मद २ कषाय ३ विषय ४ निद्रा ५ विकथा इनपाच प्रमाद सहितहोताहै इसलिये इ से प्रमतगुणस्थान कहतेहैं

यदिमुनिके सज्वलनके कषाका तीव्रोदयहो तो तात्कालनीचे गिरजाताहै और जोउसका उदय-कमहोजावेतो अतर मुहूर्त्तमें प्रमादरहित होजा—ताहै

जैसे कोई पुरुष अपने गृहपर साधारण भोजनक-
ताहै तथा किसी के यहांसे निमत्रण आने पर
खूब अपूर्व भुक्त मिष्टान्न खाताहै और कोई अपने
घरके सामान्य खान पान छोरु मिष्टान्न पर चित्त
रखता है औरजब वह नहीं मिलताहै तोउभयभ्रष्ट
होनाहै, तैसेही षष्टमगुणस्थान वार्त्तिजीव यद्यपि-
न्याय युक्त षडावश्यकादि क्रियाकर केवल पुण्य
प्रकृति मात्र का बधनकरलेताहै, मगर प्रमादस-
हितहोनेसे निरालबध्यानकी प्राप्तीनहीं होती,कारण
उभयभ्रष्टहोजाताहै इच्छातो निर्जरा की करताहै
मगर किसीसमय इतना प्रमाद वश होजाताहै
की पुण्य और निर्जरादोनो नहीं पासक्ता।

इसगुणस्थान पर चढतेही प्राणीके प्रत्याख्यानी
यक्रोध, मान माया और लोभ नष्ट होजाताहैं और
उसहीसें उनकी रागद्वेषकी श्रेणी पतलीहो जातीहै,
ससारसें राग छूटजाताहै, और शररकी ममता

दिन व दिन कम पड़ती जातीहै साधुवेषधारणकर निरती चार पालन करते हुवे जीवों को तारतेहैं,

इसगुणस्थान पर्त्ति जीव के ६३ प्रकृतिकाबंध ८१ कीउदय उदीर्णा तथा १३८ की सत्ताहोतीहै,

॥ सातवा अप्रमत्त ॥
गुणस्थान

यहगुणस्थान मुनिराजोके अंदर वर्त्तताहै, ज्यों २ सञ्ज्वलनके कषायकी मंदगति होती जातीहै त्यों २ प्रमादसें हटताहुवा इसगुणस्था पर आकर अप्रमादी होजाताहै

यद्यपि पंचप्रमादोके नामषष्टमगुणस्थानमें लिखचुकेहैं तदपि उन्होका कुछाविशेष खुलासा यहापर लिखदिखाते हैं

१ मद—जातिमद, कुलमद, रूपमद तपमद, बुद्धिमद, श्रुतमद, और लोभमद,

१ विषय–स्पर्शेंद्रीके आठविषय, हलका, भारी, रूखा, स्निग्ध, कोमल, करकस, शीत, और उष्ण

३ रसेंद्री के पाचविषय खट्टा, मीठा तीखा, कटुक, और कषायला

४ घ्राणेंद्री के दोविषय सुरभिगंध, दुरभिगध

५ चक्षु इंद्री के ५ विषय, पांचोवर्णजानना यथा लाल, नीला, पीला, काला, स्वेत

६ श्रोतेंद्री के तिनविषय सचित अचित, मिश्र शब्द

३ कषाय – क्रोध, मान, माया, लोभ, इनकी ३ चोकडियेंतो प्रथमही खपादी जातीहैं और सज्वलनकी जो बाकी रहती है वह भी पतली होती जाती है इसगुणस्थानमें आत्म विशुद्धि-जियादे होतीहै मगर ६ ठे गुणस्थानवाले जीव और ७ वे गुणस्थान वाले जीव बार २ फिरा

करतेहैं वास्ते ७ वे से फिर ६ ठे आजातेहैं

४ निद्रा— निद्रा, निद्रानिद्रा, प्रचला, प्रचला— प्रचला, स्त्यानर्द्धि

५ विकथा —स्त्रीकथा, भक्तकथा, देशकथा, राजकथा

इसस्थान पर मुनिराज अतीव विशुद्धतानव- र्तीहोजाताहैं

॥ श्लोक ॥

नष्टाशेष प्रमादात्मा । वृतशील गुणान्विता ॥
ज्ञानध्यान धनो मौनी । शमन क्षपणोन्मुख ॥१॥
सप्तकोत्तर मोहस्य । प्रशमाय क्षयायच ॥
सध्यान साधनारंज । कुरुते मुनिपुगव ॥ २ ॥

अर्थ -- प्रमादकों पूर्णरूपसें क्षयकरके पचमहा- व्रत तथा अठारह सहस्र शिलागरथका धारकहो-

जाताहै, नित्यआगमका अभ्यास करता रहताहै, एकाग्रचितसे धर्मध्यानको ध्याताहै तथा मौनगुणयुक्तहोताहै तथा प्रकृतियोंको क्षपानेमें तथा उपशमानेमें उद्यतरहताहै

यह मुनि सातको छोड़ २१ प्रकृति मोहनीयकी क्षपाने मे वा उपशमानेमे उद्यम करतारहताहै

कारण इस गुणस्थान पर सिर्फ धर्मध्यान रहता है वास्ते उसका सङ्क्षेपसे विवरण करतेहैं

॥ धर्मध्यान ॥

इसके चार भेदहो तेहै —तद्यथा —

१ आज्ञा विचय—अरिहत भगवतने जो आज्ञा फरमाइ उसपरदृढश्रद्धाररक्खे तथा नय निक्षेपादि विचारकरके तन्मयी होजावे

२ अपायविचय -इसपाये पर वर्तने वाला जीव यह विचारकताहै " मै ससार में कर्मकेवशमलीन

गिना जाता हु परतु मेरा स्वभाव मलीन नहींहे, कपायादिके वशसे परपुद्ग में रमणताकरता हू, मगर सचमे देखा जावे तो अनतज्ञानमयी, अनतचारित्रमयी, अनतवीर्य, अक्षय, अविनाशी और निराकारादिमेरेलक्षणहैं ”

३ विपाकविचय–जिसवख्तमें जैसे २ कर्मउदय आवें उस २ वख्तमे उसको समभावसे भोगवे, प्रकृति वध, स्थितिवध रसवध प्रदेशवध जिस प्रकारसे पडेहें। सतोषसे सहन करें

४ सस्थान विचय–१४ राजालोकका विचार करे कि ७ राजलोकतो सातों नरक ने दाबरक्खेहें बीच मे १८०० योजनका तिर्छालोकहै, उसपरदेशन्यून ७ राजउपरहें उनके अतमे सिद्धशिलाहे इतनी जगहमें यह आत्मा भ्रमण कर आयाहे वास्ते यह भ्रमणमिटजावे वेसीकोशीस करना

चौदह राजलोक

१ धम्मानरक २ वशानरक ३ शेलानरक ४ अजणा नरक ५ रिठानरक ६ मघानरक ७ माघवती नरक यहसात अधोलो कराज ८ तिर्छालोकसे सौधर्म देव लोक तक ९ इशान से माहेंद्रतक १० ब्रह्मसे लातक तक ११ शुक्रसें सहस्रारतक १२ आणत से अच्युततक १३ नोग्रेविकतक १४ विजयानुत्तर विमान सें सिद्धशिलाके उपरलोकके अततक-ये सात उर्द्ध राजलोक एव १४ हुवे

इतनी जगह पर यह आत्मा अनती वार फिर आया है वास्ते हे आत्मन, एसाकृत्य कर जिससें तैरा यह जवभ्रमण मिटजावे इन के शिवाय १ पदस्थ २ पिंडस्थ ३ रूपस्थ और रूपातीत इन ध्यानो मेंसे प्रथमके ३ इसगुणस्थनापर प्राप्तहोजाते है व अंतिमका ८ वेपर होजाताहै.

इनका स्वरूप ग्रंथांतरसे जानना

इस गुणस्थानवर्त्ति जीव के षडावश्यकादि कृत्य नहीं होते कारण की यह व्यवहार क्रिया है और उनके आत्म गुण मलीन न होने में निश्चय सामा यक में ही प्रवृत्ती करतेहैं यथा –गुणस्थान क्रमा रोहे

(श्लोक)

इत्येतस्मिन् गुणस्थाने। नोसत्या वश्य कानिषट् ॥
सतत ध्यान स योगा। च्छुद्धि स्वाजाविकीयत ॥१॥

इसगुणस्थानपर ५९ प्रकृतिका बंध ७६ का उदय ७२ की उदीर्णा और १३० की सत्ताहो तीहै

इसकी स्थिती जघन्य एकसमय तथा उत्कृष्ट अंतर मुहूर्त्त की जानना

॥ आठवाअपूर्व करण ॥
गुणस्थान

इसगुणस्थानपर पूर्वमें नहीं आये हुये भावप्रगट होतेहै, वे ये हैं -

१ रसघात २ स्थितिघात ३ गुणश्रेणी ४ गुणसक्रम ५ अपूर्वस्थितिबध ये पाच अपूर्व गुणप्राप्त होतेहैं.

इसगुणस्थानपर दोश्रेणिये होतीहैः—उपशम, क्षेपक

जो जीवउपशम भावसे चडताहै अवह अपनी प्रकृतियें उपशमाताहुवा ग्यारहवे गुणस्थान पर जाकर पुन· मिथ्यात्व पर गिरजाताहै तत्पश्चात-किसी समय क्षायक भावलेकर मोक्षचलाजाताहै वह अवश्य केवलज्ञान लेताहै.

क्षायक श्रेणी वालेके वास्ते यहगुणस्थान सूर्योद-यके पहिले अरुणोदयतुल्यहै

इसगुणस्थानपर समकित मोहनीका उदय नहीं रहता कारणकी सातवेके अततक उसकानाश हो-जाताहै

इसगुणस्थानपर शुक्लध्यानका प्रथमपाया 'पृथ-क्त्त्ववितर्क सप्रविचार" प्रगट होजाताहै

पृथक्त्त्वयाने भिन्न २ वितर्कयाने श्रुतावलबी स्थिरो प्योग, सप्रविचार याने निर्मलकल्पना सहित

इसगुणस्थानवाला प्रथमतो शुक्लध्यानसें विचार करताहै परन्तु पीछेसें स्वभाविक ज्ञानप्रकट होजा ताहै

इसगुणस्थानपर कृत्रिम हगादिक ध्याननहीं होते ज्ञानावर्णीय, दर्शनावरणीय, मोहनीय येथा-

तिकर्म यद्यपि उदयमें हैं तदपि इनका रस पतला-पड़जाताहै

मोहनीय कर्मकी जो १३ प्रकृति रहतीहैं सोकेवल निरसही होतीहै

जब मुनि उपशम श्रेणीगत इसगुणस्थानपर रहताहै तब वज्रऋषभनाराच, ऋषभनाराच तथा नाराच इन तीन संघयण युक्तहोताहै

यदिउपशमश्रेणीवाला जीव अल्पायुषीहो और उसही श्रेणीमें मृत्युहोजावेतो सर्वार्थ सिद्धदेवही होवे परंतु जोप्रथमसंघयण युक्त होवे सोही पंचम अनुत्तर विमान में उपजे अन्यनहीं यथा.

॥ गाथा ॥

छेवट्ठेणउग्गमई । चउरोजाकप्पकीलिआईसु ॥
चउसु दुदुकप्प वुट्टी । पढमेण जाव सिद्धात्रि ।१।

तथा जोसप्तलवाधिक आयुष्यवालाहो वह मु-
क्तियोग्यभी होसक्ताहै

यहा प्रश्नपैदाहोताहै की उपशम श्रेणी वाला कै
सेमोक्ष प्राप्तकर सक्ताहै ?

उत्तर मुहूर्तके एकादशवे भागकों लव कहतेहै
यथा – "लव सत्तहत्तरीए होई मुहूत्तो 'सो उत-
नी आयुष्यमें वह आठवेसे सातमें पर आकर पुन
क्षायक श्रेणी प्राप्तकर मोक्षही जाताहै

बाकीके सघयणवालातो नियमा ११ वें पर जाकर
प्रथमपर आजाताहै

और जो क्षायक श्रेणीगत होताहै वहतो अवश्य
मोक्षही लेताहै

इसश्रेणीवाला साधु नित्यनासाग्रध्यान रखक-
र पर्यंकाशन (पद्मासन) करनिर्मल आत्मध्यानमें
लीनहोकर प्राणायाम करतारहताहै

प्राणायाम का विचार गुरुगम्यतासे जानना.

इसश्रेणीवाला मुनि निश्चय प्रथम संघयण यु
होताहै, कारण प्रथम संघयण विना मुक्तिहोन
सक्ती

इसगुणस्थानपर २६ प्रकृत्तियोका बंध ७२ का उ
६९ की उदीर्णा तथा १३८ कीसत्ताहोतीहै

इसकी स्थिति सातवेके सदृश जानना.

नवमा अनिवृत्तिबादर गुणस्थान

अनिवृत्तिबादर याने अतिशयकरके बादरकष
को नष्टकरदिया अथवा "अनिवृत्ति" याने शुद्ध
रिणामोका फेरफारनहो और "बादर" बादर सपर
याने बादर कषायो कोनष्टकरना.

इसगुणस्थानपर अतिशय विशुद्धपरिणाम हो
नेहै

इसपर भी उपशम तथा क्षेपक दोनो श्रेणि यें होती हैं आठवेंके अतहीमें हास्य, रति, भय, शोक, दुगंच्छा ये नष्टहोजातेहैं

लौकिक रीतसें तो ये प्रकृतियें छठे में ही निकल जातीहैं मगर आत्माके शुद्ध अध्यव साय नवमें में होतेहैं वास्ते दर असल यहीं पर निकालनी चा- हिये ।

इसकेअतमें सज्वलन का क्रोध, मान, माया और लोभ तथा स्त्रीवेद और नपुंनसक वेद इन सात प्रकृतियोका अत होजाताहै

इसगुणस्थानपर १० कावध ६६ काउदय ६३ की उदीर्णा ओर १०२ कीसत्ताहोतीहै

इसकीस्थिति आठवें कें मुआफिक जानना.

॥ दसवां सूक्ष्मसंपराय ॥
गुणस्थान

यद्यपि जीव इसगुणस्थानमें सज्वलनके स्थूल लो भको अणुमात्र करदेताहै तदपि अतिविशुद्धभाव सें इसही के अतमें उसका सर्वथा क्षय कर देताहै

यदि इसगुणस्थान का अधिकारी उपशम श्रेणीवालाहोगा तो चडकरग्यारवे परआवेगाऔर क्षेपक श्रेणी वाला होगातो ग्यार वे कों छोडकरबारहवें पर जावेगा

इसगुणस्थानके अंतमें १७ प्रकृतियोंकाबंध ६० का उदय ५७ की उदिर्णा तथा १०२ प्रकृति की सत्ताहोतीहै

इसकी स्थिति नौवेंके तुल्यजानना.

ग्यारवां उपशांतमोह गुणस्थान

इसगुणस्थानका अधिकारी केवल उपशम श्रेणी वाला होताहै, क्षेपक श्रेणी वाला हो नहीं सक्ता कारण के वह उसलोभ को क्षपा देताहै

इसमें यद्यपि मोहनीय का उदय नहीं रहता तदपि सत्ता गत होनेसें पुन जागृत होजाताहै और उसही कारणसे वहां से गिरकर प्रथम गुणस्थान परआजाताहै जैसे की राखके अंदरढकी हुई अग्नी हवा के सयोग सें पुन जागृत होतीहै तद्वत् उप शमाया हुवा लोभ पुन मुक्तिकी इच्छासें जागृत हो जाताहै, कारणवहां से उसका अध पतन हो जाताहै

यदिइसगुणस्थानपर आयुष्य पर्ण करजावे तो सर्वार्थ सिद्धजावे और तदनविमोक्षजाने वाला

होतो सातवे पर ठहरताहै तथा पुन. आठवे पर चरुकर क्षेपकश्रेणी प्राप्तकर क्रमश: मोक्षचला जाताहै

इसगुणस्थान वाला अधिकसे अधिक अर्द्ध पुद्गलापरावर्त्तन तक ससारमें पर्यटन् करता है.

इसमे केवल एक सातावेदनीय का वध ५९ का उदय ५६ की उदीर्णा तथा १३९ की सत्ता हो तीहै

इसकी स्थिति दशवे के मुआफिक जानना

नोट

उपरोक्त ६ से ग्यारवें गुणस्थानर्प्यत उपशम श्रेण्याश्रयजघन्य तथा उत्कृष्ट दोनो ही अंतर मुहूर्त्त स्थिति होतीहै

॥ बारहवां क्षीण मोह गुणस्थान

इसगुणस्थानमें वीतरागीय लक्षण प्राप्तहोजातेहैं, कारणकी मोहनीय कर्म शुरुसे ही नष्ट होजाताहै

इस्में शुक्लध्यानका द्वितीय पाया प्राप्तहोजाताहै वहयहहै

२ एकत्व वितर्क अप्रविचार इससें प्राणी द्रव्य-गुणपर्याय, ज्ञान, दर्शन, चारित्र, सर्वकोएक वरतमे-समझमें लासक्ताहै तथा श्रुतावलवी कल्पना रहि-तहोताहै

इस्के अतमें शेष रही हुई ज्ञानवरणीयकी ५ दर्शनावर्णीयकी ५ तथा अतरायकी ५ प्रकृतियें ए-वम् १५ ये वध, उदय, उदीर्णा और सत्ता करके नष्टहोजातीहैं.

इसमे सातावेदनीकाबध ५५ प्रकृतियाका उदय ५२ कीउदीर्णा तथा ८८ प्रकृतिकी सत्ताहोतीहै

इसकी स्थिति ग्यारवेके मुआफिक जानना

॥ तेरवा सयोगी केवली ॥
(गुणस्थान)

इसगुणस्थानपर प्रथमसमयमे केवलज्ञान द्वितीय समयमें केवलदर्शन तत्पश्चात् यथाख्यातचारित्र तथा दानलब्धी, लाभलब्धी, भोगलब्धी, उपभोगलब्धी तथा वीर्यलब्धी आदिगुणप्रकट होतेहैं

इसगुणस्थानके अधिकारी तीनो योगोंकरकेसहित केवली महाराज होतेहैं.

यदि इस गुणस्थानपर जगत् गुरु श्रीतीर्थंकर महाराज होतो निम्नलिखित ऋद्धिके धारक तथा अतिशययुक्तहोतेहै.

चारों, निकायकेदेव जुवनपति व्यतर, ज्योतिषी, वैमानिक, श्राकर समवशरणकी रचनाकर-त्रिगडावनातेहै, उनके देशनाके समयमें वारह पर्षदा इकठी होतीहै, तद्यथा ।

१ पुरुष २ स्त्री इस्मे साधू, साध्वी, श्रावक, श्राविका का समावेशहोताहै ३ तिर्यंच ४ तिर्यंचणी ५ जुवनपतिदेव ६ जुवनपतिदेवागना ७ व्यतरदेव ८ व्यतरदेवागना ए ज्योतिषीदेव १० ज्योतिषीदेवागना ११ वैमानिकदेव १२ वैमानिकदेवागना येअष्ट महा प्रातिहार्यके धारकहोतेहैं वे ये है –

१ अशोकवृक्ष २ पुष्पवृष्टि ३ दिव्यध्वनि ४ चामरयुग ५ सुवर्णसिंहासन ६ भामडल ७ देवडुदुन्नी श्रौर ८ छत्रत्रय

ये प्रजुचोतीस अतिसय तथा ३५ वाणी गुणकरके युक्तहोतेहै (इनकास्वरूप श्रीसमवायाग सूत्रके ३४ में

समवायसें जानना) येप्रभु अपने २ समयमे न-यातीर्थ (साधू) साध्वी, श्रावक और श्राविका, प्रवर्त्ताते हैं तथा स्वय बुद्धहोतेहैं

इसगुणस्थानवर्तीजीव एकसमयमे षट्द्रव्यो को जानसक्ताहै तथा चौदहराजलोक तथा अलोक कों हथेलीके सद्दश एकसमयमें देखताहै

किसिवक्तमे जबवेदनी कर्मविशेष बाकीरहजाताहै और आयुष्यकर्म रहजाताहै तो केवली समुद्घातकरतेहैं, प्रसगोपात समुद्घातका किंचित वर्णन करतेहै

समुद्घात उसे कहतेहैं की कर्मों के समूहकीघात (नष्ट) करना

। समुद्घात सातहोतीहैः-

१ वेदनी समुद्घात २ कपायसमुद्घात ३ मरणसमुद्घात ४ वैक्रियसमुद्घात ५ तेजससमुद्घात

६ अहारक समुद्घात ७ केवली समुद्घात

इनमेंसे केवली समुद्घात ८ समयमे करतेहैं तद्यथा

प्रथम समय मे आत्मप्रदेशो को दडतुल्यकरतेहैं, द्वितीय समयमे कपाटतुल्य, तृतीयसमयमे मथानतुल्य, चतुर्थ समयमे सर्वलोकमई करदेतेहैं तथा पुन पचमसमयमे सर्वलोकसे निवृत्तकरतेहैं, छठे समयमें मथानसे, सातवेसमयमे कपाट से और आठवे समयमे दडसे निवृत्त करतेहैं

जिसकी आयुष्य केवलज्ञान प्राप्तहोनेकेबाद षट् मासकी रहीहो वह्अवश्य समुद्घातकरे बाकी छमाससे अधिक आयुष्य वाले करें नचीकरें, यदाह ।

गाथा

छमास्सारुसेसे उपन्न जेसि केवलनाण ।

तेनियमा समुघाइय सेसा नमुघा यजइअव्वा॥२॥
समुद्घातकी निवृत्तिहोने वाद केवली सिर्फ
शुक्लध्यानका तीसरा पाया ध्याताहै वह यहहैः–

सूक्ष्म क्रिया अप्रति पाति

इस्के अन में केवल १२ प्रकृतिकी सत्तारहतीहै,
वास्ते सूक्ष्मक्रिया वाला रहता है पुन कभी अध.
पतन नहीं होता

तथा मन वचन और काया को रोंधकर चौदहवे
परचलाजाताहै

इसगुणस्थान की जघन्य स्थिति अतर मुहूर्त्त
की तथा उत्कृष्ट देशन्यून (८ वर्ष) पूर्व कोटिकी
होतीहै

इसगुणस्थान में वध सातावेदनीका–अन्तमे
वधरहित–इस्मे ४२ प्रकृति काउदय ३९ कीउदीर्णा
तथा ८५ की सत्ताहोतीहै

चौदहवा अयोगी केवली गुणस्थान

इसगुणस्थानपर आकर जीव शुक्ल ध्यान के चतुर्थ पायेको ध्याताहै वह यह है –

उछिन क्रियानुवृत्ति –इसमें शेषरही हुई १३ प्रकृति यों को खपाकर शैलेषी करण करलेताहै यानि मन वचम, औरकाया कों मेरूकी परे अचल करलेताहै तथा पचलघुअक्षर अ, इ, उ, ऋ, ऌ उच्चारण करने में जितना समयलगताहै उतनी वक्त इसगुणस्थानपर रहकर मोक्षचलाजाताहै

यहापर शिष्य आचार्य महाराजकों पूछताहैकी

१ हेप्रभो? योगहोतेहुवेजी अयोगी कैसे कहेजावें? क्यों की कायातो प्रत्यक्षनजर आतीहै

२ यदिसर्वथा काय योगका अभावहैतो देहा-

मात्रमें ऐसा प्रबलध्यान कैसेहोसक्ताहै ?

उपरोक्त दोनोप्रश्नो के उत्तर आचार्य महाराज इसप्रकार देतेहैं

हे शिष्य ! उनकी काया यद्यपि दृश्य मानहै, तदपि उसको काममेंनहीं लेतेहैं कारणकी उनको केवल निरालंबनध्यानहै, अपनी आत्माके शुद्धस्वरूप मेही लीनरहते हैं सबब शुक्लध्यानके चतुर्थपायेमें मग्नरहनेसें उसकायाके साह्यकी कोई आवश्यक्तानहीं है

इसगुणस्थान वर्त्ति जीव पचलघु अक्षर कालमात्रमें उदय व सत्ताकी सर्व प्रकृतियों क्षपाकर सिद्ध शिलापर पहूच जाता है पुन' उसका कभी ससार में आगमन नहीं होता

यहापर जिसप्रकार देहा याखकाहो उसही प्रकार उसके आत्म प्रदेश सिद्धावस्थामे होजातेहैं.

सिद्धमे लीन होती वरत आत्म प्रदेशो का तीसराभाग सकोच जाताहै यानी घन होजाताहै

यदियहापर कोई शकाकरे की जीव सिद्ध शिला से ऊपरक्यो नहीं जाता तो उत्तर मे विदतहो की इस्के आगे इसकों ले जानेकी साज्य भूत धर्मा स्तिकाय नहींहै इसीसेंनहीं जाताहै इस प्रकार गुणस्थानो स्वरूप सविस्तार सम्पूर्णहुवा

॥ शुभंभूयात् ॥

श्लोक

सर्वमगल मागल्यम् । सर्वकल्याण कारण ॥
प्रधान सर्व धर्माणा । जैन जयति शासनम् ॥ १ ॥

॥ दोहरे ॥

खरतर गच्छमें दीपता त्रैलोक्य सिंधु सुजानं ।
परउपगारमे झीलता बहुगुणरया है आन ॥ १ ॥

तिनके मुख्य सुयोग्य शिष्य आनदसागर महाराय।
विनयगुणे करि शोभता महिमावर्णि न जाय ॥२॥
उनकी आज्ञापायके गुणस्थान सुविचार।
ग्रथकियो यह पूर्ण हम रत्नपुरी मझधार ॥ ३ ॥
समकित वदन विलोकवा, सांचो दर्पणजान।
गुणस्थान दर्पण भणो मिलके भविक सुजान ॥४॥
सवत् वीर चौवीससौ ऊपर चालिस मान।
सितवैशाख वारसदिने गुरुवारकरजान ॥ ५ ॥
जैनक्षत्रीमें शोभतो गौडवश प्रख्यात।
तामें हमरो जन्महै तेजकरण थे तात ॥ ६ ॥
ओछो अधिको जोकह्यो लीजो सुजन सुधार।
शेरसिंह विनती करे क्षमिये वारवार ॥ ७ ॥

॥ संपूर्णम् ॥

ॐ शांतिः शांतिः शांतिः ॥

। श्रीजिनायनम ॥

॥ वीरपुत्र श्रीआनदसागरजी ॥

॥ कृत ॥

श्री भीनासर पार्श्वप्रभुस्तवनः

भीनासर पार्श्व प्याराहै ॥

जगत के सुखकारा है ॥ टेक०

दरशकों आया मै प्रभुजी। चतुर्विध सघ साराहै ॥ जनम पावन किया मैंने। सबही आनद--काराहै ॥ भि० ॥ १ ॥ जगत तीनो के नाथाहो। इस्मे हमको प्रमाणाहै ॥ सकल गुणके निधानाहो अखिल दोषों कों त्यागाहै ॥ भि० ॥ २ ॥ रागादि-दुष्ट शत्रुको। मूलसें तोडफाराहै ॥ अनत शक्तिके धारीहो। अवरनहीं तुम समानाहै ॥ भी० ॥ ३ ॥ फरेवी अष्ट कर्मोने। जबरू करआन घेराहै ॥ भया-नक रूप को देखा। थराथर देहकॉपाहै ॥ भी० ॥४॥

प्रज्ञुमुक कों तुम लेना । तुमाराही आधाराहै ॥ कृ-
पाकर तारलोमुककों । यही आर्जुहमाराहै ~ ॥ ५ ॥
आनदमल और सुगनचन्द ॥ दिलोंसें नक्ति
काराहै । जिनेश्वर की पूजारचकर ॥ कर्मोंका वृ-
न्द तौंमाहै ॥ नी० ॥ ६ ॥ सकल सघ नक्ति
के हेतु । स्वामीवात्सल्य कीनाहै ॥ जनम स-
फल किये अपने । नवोनव सुखकारा है॥नी०
॥ ७ ॥ वीर चौवीस्से चालिशमें । जेष्ट शुक्काद्धि-
तीयाहै ॥ नीनासर नग्रकेमाही ॥ ऊलाऊलठाठ
मचायाहै ॥ नी० ॥ ८ ॥ बृहत्खरतरमे दीपे ।
सुखसुरिन्द्रराया है ॥ तास शिष्य नगवान् गुरु,
विनयवन्त कहायाहै ॥ जिना० ॥ ए ॥ तासपट धर
त्रैलोक्यसिंधु । गुरुपट कों दिपायाहै ॥ कृपाकरी-
तारिये जिनजी । आनदने गुनको गायाहै ॥
जिना० ॥ १० ॥